अनुक्रमणिका

१ सत्य	...	५
२. अहिंसा	... ...	९
३ सदाचार	... ...	१३
४. संयम	... ...	१६
५. अस्तेय	... ...	१९
६. असंचय	... ...	२३
७ क्षमा	... ...	२७
८. त्याग	... ...	३०
९. सेवा	... ...	३३
१०. सहनशीलता	... ...	३६
११. उद्योग	... ...	३९

Accession No. ३३६४
परिग्रहण संख्या
2185/1
2185/1

जीवन-निर्माण

[कहानियाँ]

... श्रीपीठ
... कृष्ण जन्मस्थान

लेखक
सुदर्शनसिंह 'चक्र'

प्रथमावृत्ति
सन् १९५९ ई०

प्रकाशक —
मानस प्रकाशन लि०
पो० — रामवन
सतना (म. प्र.)

मूल्य
एक रुपया, पचीस नये पैसे

मुद्रक
दी इलाहाबाद
ब्लाक वर्क्स
प्राइवेट लि०
जीरोरोड,
इलाहाबाद

दो शब्द

मनुष्य और पशु-पक्षी सबमें जीवन है। सब में जीवित रहने की इच्छा है। सब जीवित रहने के लिए प्रयत्न करते हैं। इसलिये भोजन करना, भोजन पाने का प्रयत्न करना, मल-त्याग, नींद लेना, विपत्ति से भय, अपनी रक्षा के लिये चेष्टा, सन्तान उत्पन्न करना और सन्तान के लिये मोह ये बातें मनुष्य और-पक्षी आदि सभी में पाई जाती हैं।

अपनी इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए थोड़ी बहुत समझ भी सभी प्राणियों में होती है। मनुष्य सृष्टि कर्ता की सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। लेकिन केवल बुद्धि के कारण मनुष्य सर्वश्रेष्ठ नहीं है। बुद्धि के कारण ही उसे श्रेष्ठ मानें तो बहुत सी बातों में दूसरे पशु भी बहुत से मनुष्यों से अधिक समझदार जान पड़ेंगे।

मनुष्य की श्रेष्ठता है धर्म के कारण। धर्म का मतलब कोई सम्प्रदाय नहीं है। धर्म का मतलब वे मूलभूत नियम हैं, वे सद्गुण हैं, जिनके कारण मनुष्य अपने और विश्व के दूसरे सब लोगों के लिए सुखदायी सहायक और उन्नति का साधक बन जाता है।

उन सद्गुणों में ही मनुष्य के जीवन का सच्चा निर्माण होता है। मनुष्य-जीवन के निर्माण करने वाले उन सद्गुणों को छोटी कहानियों के द्वारा इस पुस्तक में समझाने की चेष्टा की गई है।

लेखक

Accession No:
परिग्रहण संख्या ३२६४
श्रीकृष्ण शोधपीठ
श्रीकृष्ण जन्मस्थान

सत्य

वह केवल तेरह-चौदह वर्ष का बालक था। उसका नाम था तेंग.शी.चेग लेकिन सुविधा के लिए हम उसे तेंग कहेंगे। जापानी सेना ने चीन पर आक्रमण किया था। चीनी देश-भक्तों की टोलियाँ हार रही थीं। उन लोगों ने तेंग को कुछ आवश्यक समाचार लेने जापानी सेना के शिविर में भेजा।

तेंग फलों का टोकरा लेकर जापानी शिविर में गया। उसे साधारण फल बेचने वाला समझ कर किसी ने रोका नहीं। लेकिन फल बेचते हुये एक उच्च अधिकारी के तम्बू में तेंग यह देख कर घुस गया कि तम्बू खाली है। उसने वहाँ से एक नक़शा उठाकर फलों के टोकरे में नीचे छिपा दिया।

तेंग जब नक्शा छिपा रहा था वह अधिकारी आ पहुँचा। फल यह हुआ कि तेंग पकड़ लिया गया और उसे उस जापानी सेना के ऊँचे अधिकारी के सामने पहुँचाया गया।

अधिकारी ने पूछा—'तुम यहाँ क्यों आये थे ?'

तेंग—यह पता लगाने कि आपकी यह सेना आगे किस ओर आक्रमण करेगी। जिससे अपने देश के लोगों को मैं सावधान कर सकूँ। क्योंकि मैं पकड़ लिया गया, इसलिये मेरा प्रयत्न नष्ट हो गया।

अधिकारी को आश्चर्य हुआ कि यह बालक फल-बेचने और फल रखने के लिये बड़े कागज को चुराने की बात न कहकर सच बोल रहा है। उसने पूछा—'तुम जानते हो कि तुम्हारे अपराध का क्या दण्ड मिलेगा ?

तेंग—'जानता हूँ। आप मुझे गोली मार देंगे।

अधिकारी—'तब तुमने बहाना बनाकर बचना क्यों पसन्द नहीं किया ?'

तेंग—'चीनी देश-भक्त का लड़का प्राण जाने के भय से झूठ नहीं बोल सकता।

अधिकारी—तुम्हे किसने भेजा है ? वे लोग कहाँ है ? यदि तुम यह बता दो तो तुम्हें छोड़ दिया जायेगा।

तेंग—'अपने देश और अपने लोगों के साथ मै विश्वासघात नहीं कर सकता। किसी भी लालच से मै आपको यह सब नहीं बताऊँगा।

जापानी सैनिक अधिकारी ने अपने साथियो से कुछ सलाह की और फिर तेंग से बोला—हम तुम्हारी सच से बहुत प्रसन्न है। तुमको छोड़ दिया जाता है

सच बात यह थी कि जापानी अधिकारी ने उसके पीछे अपने जासूस लगा दिये थे कि वे देखें कि तेंग कहाँ जाता है और किन लोगों से मिलता है।

तेंग भी कम चतुर नही था वह वहा से व्यर्थ कुछ सड़को पर भटकता रहा और शाम को नदी के किनारे चला गया। अन्त मे जापानी सेना के जासूस की आँख बचाकर वह निकल जाने मे सफल हो गया।

तेंग में यह गौरव था कि मै चीनी देश-भक्त का लड़का होकर झूठ कैसे बोल सकता हूँ हमारे लिये यह क्या कम गौरव की बात है कि हम भारतवासी है। भारती होकर हम कहीं किसी बात मे किसी लोभ या डर से झूठ बोलें यह हमारे लिये बहुत लज्जा की बात है।

राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी जी कहते थे—'सत्य ही परमेश्वर है' सत्य को पूरी तरह पा लेना परमेश्वर को अपने भीतर पालेना है।

सत्य को अपनाने वाला सब का विश्वास पा लेता है, उसे सब ओर सफलता मिलती है। सबसे बड़ी बात यह कि सत्य पर स्थिर रहने वाले को जो निश्चिन्तता, निर्भयता और अपने आप पर भरोसा रखने का बल प्राप्त हो जाता है; उसकी तुलना संसार के बड़े से बड़े सुख एवं सम्मान से नहीं की जा सकती।

अहिंसा

महात्मा गान्धी के नेतृत्व में जो अहिंसा सत्याग्रह चल रहा था, भारत के पड़ोसी देश बर्मा के लोग उससे अनजान नहीं थे। अभी पिछले महायुद्ध की बात है, जब कि जापानी सेना ने बर्मा पर आक्रमण कर दिया और अंग्रेजों को एक के बाद दूसरा स्थान छोड़कर पीछे हटते जाना पड़ा।

जापानी सेना की एक टुकड़ी बर्मा के पहाड़ी क्षेत्र में होकर रंगून की ओर आ रही थी। इस टुकड़ी के पास खाने-पीने के सामान की कमी हो गई। दूध, सब्जी और फल तो कई दिनों से सैनिकों को नहीं मिला था। सैनिक प्रसन्न थे; क्योंकि वे एक पहाड़ी कस्बे के पास पहुँच रहे थे और उनको आशा थी कि वहाँ उन्हें सब प्रकार की खाने-पीने की चीजें मिल जायेंगी।

अचानक एक नौजवान उस कस्बे से सेना की ओर आता दिखाई पड़ा। उसने सैनिकों को रुकने के लिये पुकार कर कहा। सैनिक रुक गये और उसकी प्रतीक्षा करने लगे।

समीप आकर उस नौजवान ने जापानी सेना के अफसर को अभिवादन किया और बोला—'कृपा करके आप अपने सैनिकों के साथ हमारे कस्बे को एक ओर छोड़कर आगे चले जाँय।

'क्यों ?' सैनिक अफसर ने पूछा।

'इसलिये कि हमारे मुखिया नहीं चाहते कि सेना के लोग कस्बे में आवें और यहाँ के लोगों को तंग करें।' नौजवान ने कहा।

'हम तुम्हारे मुखिया का हुक्म नहीं मान सकते।' अफसर ने कहा। उसे कुछ क्रोध आ रहा था।

'तब आप हम सबको मारे बिना कस्बे में नहीं जा सकते।' नौजवान ने निर्भयता पूर्वक कहा—'आप देखिये, कस्बे के सब लोग—स्त्रियाँ और बच्चे तक रास्ते में खड़े हैं और उनमें कोई रास्ता नहीं छोड़ेगा।'

'तुम लोग लड़ाई करोगे ?' अफसर ने क्रोध से पैर पटका।

'अपने से दुर्बल लोगों से हम लड़ाई नहीं करते।' नौजवान बोला।

'क्या ?' अफसर चीख पड़ा—हम लोग तुमसे कमजोर हैं ?'

'नाराज होने की कोई बात नहीं।' नौजवान स्थिरता

पूर्वक कह रहा था—'आप लोगों के पास बड़े बड़े हथियार हैं। मारकाट करने की शक्ति आपके पास बहुत अधिक है। लेकिन आपका भरोसा इन वैज्ञानिक ढंग के हथियारों पर है, जो हत्या के खून से अपवित्र हो चुके हैं।

'तुम लोगों के पास क्या है ? अफसर ने पूछा।

'हथियार के नाम पर एक छड़ी भी नहीं है।' नौजवान ने कहा—'लेकिन हमारा भरोसा भगवान बुद्ध की अहिंसा पर है, जो भारत में फिर से महात्मा गांधी के रूप में आकर वे मनुष्यों को सिखा गये हैं।

जापानी सेना का वह अधिकारी स्वभाव का भला था। महात्मा गांधी के नाम से भी वह परिचित था। वह बोला—'तुम अपने मुखिया से कहो हम कस्बे के लोगों को तंग नहीं करेंगे। हो सकता है कि तुम्हारी बात ठीक हो। लेकिन हमारे सैनिक थके हैं और भूखे भी हैं।

नौजवान लौट गया। अन्त में सेना के अधिकारी ने यह बात मान ली कि सेना कस्बे से दूर पड़ाव डालेगी। कोई सैनिक कस्बे में नहीं जायगा। कस्बे का मुखिया सेना को दूध, फल, शाक आदि चीजें जितनी दे सकेंगे सेना के पड़ाव पर भेज देंगे और उन चीजों का मूल्य अलग दिया जायगा।

अहिंसा केवल बड़े-बड़े आन्दोलनों के लिए नहीं है

ऐसी बात यहाँ समझने की भूल हमें नहीं करनी चाहिये। हमारे दैनिक जीवन में अहिंसा आ जावे तभी हम बापू के दिखाये रास्ते पर चलने वाले कहला सकेंगे।

अहिंसा का अर्थ केवल किसी को न मारना नहीं है। अपने शब्द या अपनी किसी चेष्टा से किसी को दुःख पहुंचाना हिंसा ही है और इस प्रकार की हिंसा को एक दम छोड़ देना अहिंसा है।

सदाचार

'रामनाथ ! क्या दशा है तुम्हारी ?' यह रामनाथ गाँव का सबसे सुन्दर और बलवान नौजवान था। आज दो वर्ष पीछे बम्बई से लौटकर आया है। उसकी दशा देखकर आश्चर्य और दुःख दोनों हुआ।

'अपनी करनी का फल भोग रहा हूँ बाबू।' रामनाथ रो पड़ा।

'बम्बई का पानी बहुत लोगों को रोगी कर देता है।' मैंने कहा।

रामनाथ बोला—'बाबू, पानी का कोई दोष नहीं है। दोष तो अपना है। बम्बई में जाकर मेरा भाग्य चमका। पैसा मिला। लेकिन पैसे के साथ मुझमें कुबुद्धि आ गई। कुछ बुरा संग-साथ हो गया।'

'तुम तो बहुत सदाचारी थे और अच्छे संग में ही रहना पसन्द करते थे।' मैंने सहानुभूति प्रगट की।

रामनाथ,—'मेरी बुद्धि मारी गई थी। पैसा गया, तन्दुरुस्ती गई और बीमारी ने तोड़ दिया। किसी तरह

हड्डियाँ बची हैं। अब आप लोगों के चरणों में आ गिरा हूँ। शायद बची जिन्दगी सुधर जाय।

बहुत ही दुःखी था रामनाथ। उसके शरीर में मांस का नाम नहीं जान पड़ता था। हड्डी-हड्डी दीखती थी। गाल पिचक गये थे। आँखें गड्ढों में धँसी थी। चलते समय उसके पैर काँपते थे।

गाँव के सबसे अच्छे नौजवान की यह दशा देखकर किसे दुःख नहीं होगा। मैंने रामनाथ को धैर्य दिलाया और बैठाया। उससे उसकी सब बातें पूछने लगा।

पैसा मिलने पर बुरे लोगों का साथ हुआ। उनके संग के दोष से रामनाथ सदाचार के मार्ग से हट गया। वह कई प्रकार की बुराइयों में लगा।

बुराइयों में लगने पर उसकी बदनामी होने लगी। दूसरी ओर कदाचरण में पैसा और स्वास्थ्य नष्ट होने लगा। उसे कई प्रकार की बीमारियाँ हो गईं। बचा-खुचा धन चिकित्सा में चला गया। जो लोग उसको बुराई के रास्ते ले गये थे, पैसा न रहने पर उन्होंने साथ छोड़ दिया। आस-पास के लोगों में वह पहिले ही बदनाम हो चुका था। यह तो अच्छा हुआ कि किसी तरह गाँव आ गया।

रामनाथ ने यह सब बताया। वह बोला—'बाबू!

सदाचार का पालन करता था, तब सब लोग मेरा आदर करते थे। आप सब मुझ से स्नेह करते थे। मेरा मन सदा प्रसन्न रहता था। मैं सुखी था स्वस्थ था और दूसरों को भी मुझ से सुख मिलता था।

जैसे ही मैं सदाचार के रास्ते से हटा मुझे बराबर डर रहने लगा कि लोग मेरी बुराई जान न लें, मेरे लाख सावधान रहने पर भी मेरे दोष प्रकट हो गये मेरा अपमान हुआ। लोग मुझसे घृणा करने लगे।

मेरा धन नष्ट हुआ। मेरे मन की शान्ति नष्ट हुई। मेरी तन्दुरुस्ती चौपट हो गई। अपना मैंने सर्वनाश कर लिया और दूसरों की भी मुझसे बराबर हानि हुई।

रामनाथ दुःखी था। मैं उसे समझाता रहा। लेकिन बात तो सच ही है उसकी। सदाचार का पालन करने वाला सुखी रहेगा—समाज को सुख शान्ति और सदाचार का पालन न करने वाला समाज की हानि तो करेगा ही अपने स्वास्थ्य, सम्मान और धन का तो विनाश ही कर लेगा।

संयम

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधीजी ने कहा था—'मैं मनुष्य की गुलामी सह लूँगा, किन्तु मन की गुलामी बिलकुल नहीं सह सकता।'

यह बात मुझे वीरेश्वर ने कही और बोला—"आप महात्मा जी की इस बात को कैसे ठीक कह सकते हैं।'

मैं—'मनुष्य की गुलामी से क्या हानि है?'

वीरेश्वर—'पराधीनता तो सबसे बड़ी बुराई है। उससे तो मनुष्य के सब गुण मारे जाते हैं। किसी ओर वह अपना विकास नहीं कर सकता।'

मैं—'एक पागल आदमी मकान की छत से कूदना चाहे तो उसे तुम स्वतन्त्र कर देना पसन्द करोगे?'

वीरेश्वर—बिलकुल नहीं। उसे कमरे में बन्द कर देना पड़ेगा। स्वतन्त्र कर देने पर तो वह छत से कूदकर अपने हाथ-पैर तोड़ लेगा और कौन जाने, मर भी जा सकता है।'

मैं—मनुष्य का जीवित रहना और सकुशल रहना

पहिली आवश्यकता है। स्वाधीन रहना उसके पीछे की बात।

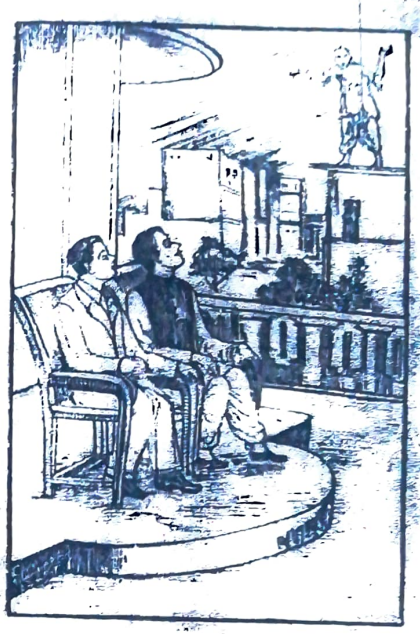

वीरेश्वर—'जी हाँ।'

मैं—'तब देखो, मन का गुलाम उस पागल से भी बुरा होता है। वह अपने मन की बात करना चाहता है। मन इन्द्रियों के पीछे दौड़ता है।'

वीरेश्वर—'इसमें बुराई क्या हुई?'

मैं—'जो मनुष्य चटोरे होते हैं, उनका क्या हाल होता है?'

वीरेश्वर—'वे अक्सर रोगी हो जाते हैं। जीभ पर वश न होने से वे अनाप-शनाप खाकर पेट खराब कर लेते हैं और तब बीमार पड़ते हैं। स्वाद लेने की शक्ति से भी वे हाथ धो बैठते हैं।'

मैं—'केवल जीभ की गुलामी के कारण स्वास्थ्य एवं जीवन दोनों खतरे में पड़ जाता है।

वीरेश्वर—'बात तो आप ठीक कहते हैं। इन्द्रियों की दासता करने वाला अपने स्वास्थ्य का अवश्य नाश कर लेता है।'

मैं—'स्वास्थ्य के नाश में किसी सद्गुण के पनपने की कोई सम्भावना है?'

वीरेश्वर—'एकदम नहीं।'

मैं—'इस प्रकार मन की दासता करने वाला अपने लिये ही दुःखदायी नहीं होता। दूसरों को भी उससे पीड़ा मिलती है।'

वीरेश्वर—'कोई अपने उपार्जन के धन से असंयम करे, किसी कुमार्ग पर न चले तो दूसरों की क्या हानि?'

मैं—'एक मनुष्य बीमार होगा तो उसकी सेवा में औरों को लगना पड़ेगा? उसका रोग यदि संक्रामक हुआ तो दूसरे बीमार पड़ेंगे? वह जो जीभ आदि की तृप्ति के लिये पदार्थों का अनाप-शनाप उपयोग करता है, दूसरों को उन पदार्थों से वञ्चित होना पड़ता है।'

वीरेश्वर सहसा बोला—'मैं समझ गया। समाज की सुख-शान्ति और अपनी सुख-शान्ति के लिये भी संयम बहुत आवश्यक है। संयम का पालन स्वाधीनता की अपेक्षा भी अधिक आवश्यक है।'

अस्तेय

'आज आप बहुत उदास दीखते हैं।' बात सचमुच अटपटी थी। क्योंकि भाई हरिसिंह सदा हँसने वाले लोगों में हैं। उनका चेहरा गुलाब के फूल की भाँति खिला ही रहता है।

पण्डित जी की बात सुनकर भाई हरिसिंह ने कहा—छोटा बच्चा बीमार है। महीने के अंतिम सप्ताह में खाली रहता है। बाजार नीबू लेने गया था तो देखा किसी ने जेब उड़ा दी है।'

'नीबू आप मेरे यहाँ से ले जाइये।' पण्डित जी बोले

गये और एक में से लाकर उन्होंने भाई हरिसिंह को दो नीबू दिये।

'मैं पिछले वर्ष ही विलायत गया था।' भाई हरिसिंह ने कहा—'लन्दन से दूसरे शहर जाते समय ट्रेन में मनीबेग भूल गया। कुछ कागज जेब से निकाले थे, उसी समय गिर गया होगा। मनीबेग में मेरे नाम का कार्ड था, जिस पर मेरे ठहरने का पता लिखा था। तीसरे दिन रेलवे-विभाग ने पार्सल से मेरा मनीबेग मेरे पास भेज दिया।'

'दूसरे देशों में इस प्रकार चोरी न होने की बातें वहां जाने वाले लगभग सभी कहते हैं।' पण्डित जी ने कहा—'यह एक प्राकृतिक नियम है कि चोरी करने वालों को आखिर में रोटी के लाले भी पड़ते हैं। जहाँ के लोग आमतौर पर चोरी नहीं करते, वहाँ भुखमरी नहीं आती।'

'चोरी और भूखमरी का क्या सम्बन्ध?' पड़ोस के अन्न के व्यापारी भूरेमल जी ने पूछा। वे भी किसी काम से पण्डित जी के पास आये थे।

'यह एक नियम है कि जिस शक्ति का आप दुरुपयोग करते हैं प्रकृति उसे आप से छीन लेती है।' पण्डित जी ने बताया—'जैसे जो बहुत स्वाद के पीछे पड़ता है, उसकी भोजन करने की शक्ति पेट खराब होने से नष्ट हो जाती है।

'लेकिन, चोरी से इसका तो कोई सम्बन्ध नहीं।' भूरेमल जी ने कहा।

'बहुत सी बातें हमें दीखती नहीं, लेकिन वे होती हैं।' पण्डित जी कह रहे थे—'चोरी दूसरे के धन को गलत ढंग से लेना है। यह धन का दुरुपयोग है। इसलिए धन जब इस रास्ते आता है, वह घर के धन को भी किसी न किसी बहाने नष्ट ही करता है।'

बात भूरेमल जी की समझ में नहीं आई। पण्डित जी ने फिर कहा—'यहाँ सब लोग प्रायः किसी विदेशी कम्पनी का माल लेना क्यों पसन्द करते हैं? आप जानते हैं।'

'विदेशी कम्पनियों का माल अक्सर ठीक होता है।' भूरेमल जी ने कहा—'उसमें मिलावट होने का भय नहीं होता और उनका दाम भी निश्चित रहता है।'

'अब बताइये जो लोग माल में मिलावट करते हैं, घटिया माल देते हैं, दाम बताकर बेईमानी करते हैं, वे ज्यादा लाभ में रहते हैं या जो ईमानदारी से काम करते हैं वे?' पण्डित जी ने पूछा।

'व्यापार में लाभ तो साख से होता है।' भूरेमल जी ने बताया—'ईमानदार व्यापारी की साख जग जाती है। लोग उस पर और उसके माल पर भरोसा करते

है। इसलिये उसकी बिक्री अधिक होती है। लाभ में वही रहते हैं।

'भाई! चोरी और बेईमानी दोनों आदमी की साख गिरा देते हैं।' पण्डित जी ने कहा—'आदमी दूसरों की दृष्टि में और उससे भी पहिले अपनी दृष्टि में ही गिर जाता है। फिर कुछ प्रकृति के भी नियम हैं। वे नियम प्रायः कठोर होते हैं। बुराई के रास्ते आया धन सुख नही देता।'

'पण्डित जी! इतना मैं भी समझता हूँ कि जो किसी प्रकार की चोरी और बेईमानी नही करता, ठीक आदमी वही है।' भाई हरिसिंह जी बोले—'उसके जरिये ही देश और समाज की सेवा होती है। वह खुद भी सुखी, प्रसन्न और निर्भय रह सकता है।'

भाई हरिसिंह को जल्दी थी। वे नीबू लेकर चले गये।

असंचय

फसल कट चुकी थी। खेत से अन्न उठाया जा चुका था। मैंने देखा कि हरिजनों का एक समूह खेत के एक स्थान पर गड्ढा खोद रहा है। कुतूहलवश मैं उनके समीप चला गया।

'तुम लोग क्या कर रहे हो? मैंने पूछा।

वे लोग कोई सीधा गड्ढा नही खोद रहे थे।

'चूहे का बिल खोद रहे हैं। उनमें से एक ने बताया।

'चूहे को पकड़ना है तो बिल में पानी

कहा—वह अपने आप निकल आवेगा।

'इस बिल से अन्न मिलेगा। उन लोगों

उन लोगों को काफी टेढ़ा और गहरा बिल मिल उसे बराबर खोदते गये। अन्त में उसमें अन्न का एक भण्डार मिला। साथ ही चार-पाँच चूहे जिनमें कुछ बच्चे भी थे, निकले। चूहे के बिल से जो अन्न निकला उसे देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। मेरा अनुमान है कि अवश्य तीस-पैंतीस सेर वह होगा।

वह मिला-जुला अन्न था और उसमें घास के बीज तथा दूसरा कूड़ा भी काफी था; फिर भी अन्न की राशि बड़ी थी चूहे खेतों से किसान के परिश्रम की कमाई कितनी बड़ी मात्रा में चुरा लेते हैं, यह देखकर मैं हैरान हुआ।

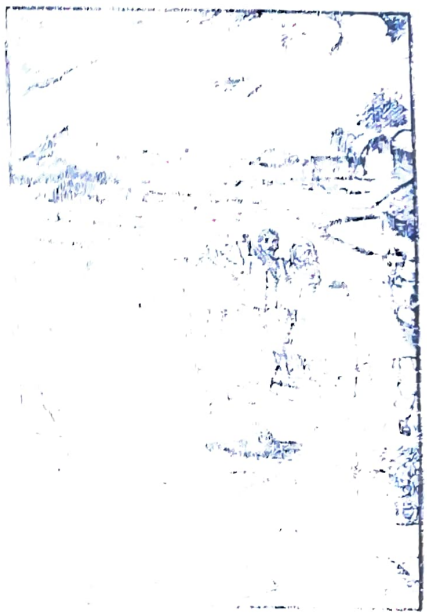

वे लोग चूहे के बिल से निकला अन्न परस्पर बाँट रहे थे। उनमें से एक ने बताया—'वर्षा से कुछ पहिले खोदने पर चींटी के बिल से भी सात-आठ सेर अन्न निकल आता है। लेकिन चींटी के बिल में अन्न के नाम पर घास के बीज ही अधिक होते हैं।

बिल खोदने पर चींटियाँ और उनके अण्डे-बच्चे मर नहीं जाते?' मैंने पूछा।

वे तो मरते ही हैं। उसने बताया।

'बुरी बात है।' मैंने कहा।

'क्या बुरी बात है बाबू?' वह हरिजन मेरा मुख देखने लगा।

चूहा दूसरे की कमाई चोरी करके इकट्ठा करता है। इसलिये उससे वह छीन लेना ठीक है। मैंने समझाया—'लेकिन चींटी परिश्रम करके घास के बीज वर्षा के उन दिनों के लिये इकट्ठा करती है, जब उसे भोजन को कुछ नहीं मिल सकता। उससे उसकी मिहनत की कमाई छीन लेना और उसके अंडे-बच्चे नष्ट कर देना बहुत बुरी बात है।'

उस हरिजन भाई की समझ में मेरी बात आगई और उसने उसी दिन से चींटी के बिल न खोदने की प्रतिज्ञा कर ली।

हमारे समाज में भी दो प्रकार के संचय करने वाले लोग हैं—(१) चूहों जैसे और (२) चींटियों जैसे।

दूसरों के परिश्रम की कमाई जो इकट्ठा करते हैं और उससे खुद लाभ उठाना चाहते हैं—ऐसे लोग चूहों जैसे हैं।

किसान, मजदूर और दूसरे लोग जो परिश्रम करके कमाई करते हैं और विपत्ति में काम आने के लिये कुछ धन इकट्ठा करते, वे चींटियों के समान बुद्धिमान हैं। वे

सबके लिये आदरणीय हैं।

एक तीसरा प्राणी होता है गोह। वह अपने बिल के मुख पर कंकड़ियाँ इकट्ठी करता है। इन कंकड़ियों से उसे भी असुविधा होती है और दूसरे जीवों को भी आने-जाने में कष्ट होता है।

हम सब में गोह का यह अविचार कुछ पाया जाता है। अपनी आवश्यकतासे अधिक अन्न, कपड़े, जूते तथा दूसरी बहुत सी वस्तुयें हम लोग इकट्ठी करते रहते हैं।

इस प्रकार व्यर्थ संग्रह रखने से हमको उन वस्तुओं की रक्षा की चिन्ता बनी रहती है। साथ ही इस प्रकार बहुत अधिक सामान घरों में बेकार इकट्ठा रहने के कारण बाजार में उन सामानों की कमी रहती है, उनके दाम बढ़े रहते हैं और दूसरे लोगों को अपनी आवश्यकता का सामान मिल नहीं पाता।

हम चूहे या गोह न बनें, यही असंचय का पाठ है। अपनी सच्ची आवश्यकता से अधिक कोई वस्तु इकट्ठी न करें।

कृष्ण शोधपीठ
कृष्ण जन्मस्थान

क्षमा

'मैं कालू की हड्डी पसली तोड़ दूँगा और उसके खेत में एक तिनका नहीं रहने दूँगा। वीरभद्र क्रोध में लाठी उठाये हरिजनों के घर की ओर जा रहे थे और ऊँचे स्वर से कुछ बकते भी जाते थे।

कालू चमार है। गरीब है शरीर से भी कमजोर है। लेकिन है थोड़ा दुष्ट। वह प्रायः लोगों के खेत में अपनी गाय छोड़ देता है। उसने वीरभद्र का मटर का खेत कल शाम गाय से चरा लिया। हानि थोड़ी हुई है लेकिन कालू का दोष तो है।

'आप आज मेरी एक बात मानेंगे। सुमन्त पण्डित ने वीरभद्र जी को बीच में ही पुकार लिया और कहने लगे—'मानें तो कहूँ।'

'आपकी बात मैंने कभी टाली है। वीरभद्र बोले।

सुमन्त पण्डित गाँव के सबसे बड़े हैं विद्वान हैं और बहुत भले हैं। सबके सुख-दुख में हैं। सब लोग उनका आदर करते हैं।

'कालू की गाय ने आपका कितना नुकसान किया ?' पण्डित ने पूछा।

'दस सेर मटर तो जरूर निकलती उन पौधों से जिन्हें वह चर गई।' वीरभद्र बोले।

'आप मेरे यहाँ से दस सेर मटर ले जाइये' सुमन्त्र पण्डित ने कहा—'लेकिन यहीं से घर लौट जाइये कालू से कुछ मत कहिये। उसकी दूसरे किसी से निन्दा मत कीजिये।

'मटर की तो कोई बात नहीं' वीरभद्र कहने लगे—'लेकिन यह कालू का बच्चा बहुत बिगड़ गया है।'

'आप बलवान हैं। कालू ने अपराध न किया होता तो क्षमा की बात क्यों उठती ?' सुमन्त्र पण्डित बोले—बलवान को ही क्षमा करने का अधिकार है। इस बार उसे क्षमा कर दीजिये। क्रोध का कोई अच्छा फल नहीं होता, उस का फल भी एक बार देखिये।'

'अच्छी बात जैसा आप कहें।' वीरभद्र ने बात मान ली और वे घर लौट गये।

कालू को भी इन बातों का पता लग गया। छोटे से गाँव में बात फैलते देर तो लगती नहीं। उसे बड़ी लज्जा आई। वह दोपहर में ही सुमन्त्र पण्डित के पैरों पर आकर गिर पड़ा।

'तुम वीरभद्र से माफी माँग लो।' सुमन्त्र पण्डित ने कालू को वीरभद्र के घर भेज दिया। लेकिन थोड़ी देर में कालू को साथ लिये वीरभद्र खुद पण्डित जी के यहाँ आ गये।

'मैंने आपकी मात मान ही ली थी। क्षमा तो तभी कर दिया।' वीरभद्र बोले—'इसे आपने मेरे पास क्यों भेजा ?'

'आप इसे मारते' इसका खेत चरा लेते तब आपको इतनी ही प्रसन्नता होती क्या ?' सुमन्त्र पण्डित ने पूछा।

'सो तो नहीं होती।' वीरभद्र ने स्वीकार किया।

'हानि तो आपकी जो हुई, वह हो ही चुकी थी।' पण्डित जी ने कहा—'यह दुःखी होता और मन में आप की शत्रुता लिये फिरता। अब यह आपका हितैषी हो गया है।'

कालू पण्डित जी के पैरों पर गिर पड़ा और उसने क्षमा अपराध फिर न करने की प्रतिज्ञा की।

त्याग

'पिताजी, ये लोग अपना अन्न मिट्टी में क्यों डाल रहे हैं ? नन्हें लल्लू ने पूछा ।

पिता—'ये खेतों में अन्न बो रहे हैं । यह अन्न उगेगा और फिर फलेगा । एक दाना कई सौ दाने बनकर इनके पास लौट आयेगा ।'

लल्लू कुछ मिनटों में यह सब भूल गया । वह चिड़ियों और गायों को देखने में मस्त हो गया । पिता के साथ ही घर लौटा; किन्तु उसके हाथ में तब एक सुन्दर फूल था ।

'मैं फूल लूंगी ।' लल्लू से छोटी श्यामा फूल देखते ही दौड़ पड़ी और उसने अपने छोटे हाथ फूल लेने के लिये उठाये ।

'फूल मेरा है !' लल्लू ने हाथ ऊपर उठा लिया और श्यामा से बचने लगा । श्यामा का भोला मुख उदास हो गया ।

'लल्लू ! तुम अच्छे लड़के हो । अपनी छोटी बहिन को फूल दे दो ।' पिता ने पुचकारा—'तुमने देखा है न कि

किसान किस तरह खेत में अन्न बोकर लाभ उठाते हैं ।

'मेरा फूल सौ फूल बनकर लौट आयेगा । लल्लू ने पूछा । अभी वह हाथ ऊपर उठाये था ।

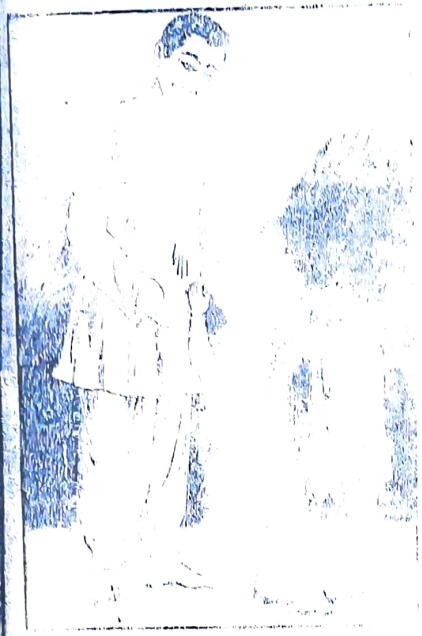

'तुम देखकर देखो' पिता ने कहा ।

लल्लू ने फल दे दिया । फल पाकर श्यामा बहुत प्रसन्न हुई । वह कुदती-नाचती घर में माता जी के पास दौड़ गई लल्लू उसके पीछे ही दौड़ता गया । श्यामा ने दूर से ही पुकारा— माता जी ! देखो कैसा अच्छा फूल है । मुझे भैया ने दिया है ।

माँ ने उठकर लल्लू को गोद में उठा लिया । उसे प्यार करके बोली — मेरा बेटा बहुत अच्छा है ।

इसके बाद माँ ने मेवे निकाले और दोनो बच्चों को दिया । मेवे लेकर लल्लू पिता के पास आया । तब उसने पूछा—'पिताजी ! मेरा फूल तो सौ फूल बनकर नहीं लौटा

पिता—'बेटे ! हम दूकानदार को पैसा देते तो वह पैसा ही नहीं लौटाता। वह उसके बदले की वस्तु देता है। तुम्हारे फूल के बदले तुम्हें माँ का प्यार प्रसन्नता और मीठे मेवे मिले या नहीं ?'

छोटे लल्लु की समझ में बात आई या नहीं मैं नहीं जानता लेकिन हमारी आपकी समझ में बात आ जानी चाहिये। बिना कुछ त्याग किये संसार में कुछ मिलता नहीं, यह पहली बात।

थोड़ा त्याग करने से अधिक मिलता है, यह दूसरी बात।

अपने अधिकार का हठ करने से आपस में कड़ुवाहट बढ़ती है झगड़ा होता है। लेकिन दूसरे का अधिकार मानने और अपने अधिकार का दूसरे के लिये त्याग करने से प्रेम मिलता है। यह तीसरी बात।

त्याग कभी व्यर्थ नहीं जाता। आप त्याग करते हैं तो आपको प्रसन्नता सम्मान और दूसरों का स्नेह अवश्य मिलता है। यह चौथी बात।

दूसरो के स्वार्थ का त्याग करने की भावना जिसमें जितनी ज्यादा है वह उतना ही देवत्व की ओर बढ़ा है। जिस समाज मे ऐसे लोग जितने अधिक हैं। वह उतना उत्तम और सच्चा सम्पन्न समाज है यह पाँचवीं बात।

सेवा

कृष्णकिशोर और रामकुमार दोनों मित्र थे। उस दिन दोनों सायकिल पर सवार होकर जा रहे थे। दोनों को बजार जाकर कुछ सामान खरीदना था।

रास्ते में सड़क के फुटपाथ पर एक मैली गुदड़ी ओढ़े कोई आदमी लेटा था। वह कराह रहा था। कृष्ण किशोर सायकिल से उतर पड़ा। रामकुमार को भी उसके साथ उतरना पड़ा।

रामकुमार ने कहा—'हम दोनों को बाजार से चीजें लेकर झटपट घर लौटना है। घर के लोग रास्ता देखेंगे।

कृष्णकिशोर ने तब तक उस आदमी की गुदड़ी थोड़ी हटाकर उसका मुख खोल दिया था और उसका हाथ देख रहा था। वह बोला—'यह आदमी बीमार है। इसे तुरन्त अस्पताल पहुँचाना चाहिये। एक रिक्शा ठीक करो।'

रामकुमार ने रिक्शा ठीक किया। दोनों उस आदमी

को रिक्शे में बैठाकर साथ-साथ अस्पताल गये। रिक्शे वाले को कृष्णकिशोर ने पैसे दिये। उस आदमी को अस्पताल में भर्ती कराने में उन्हें देर लगी। वहाँ लगभग दो घण्टे रुकना पड़ा।

अस्पताल में उसे भर्ती करा के जब दोनों बाजार चले, तब रामकुमार ने कहा—'तुम व्यर्थ झमेले में पड़ गये। हमें बहुत देर हुई।'

कृष्णकिशोर—'यह व्यर्थ झमेला नहीं था। उस आदमी को हमारी सहायता की आवश्यकता थी। उसकी सहायता करना हमारा कर्त्तव्य था।

रामकुमार—'तुम उसे पहिचानते थे?'

कृष्णकिशोर—'नहीं। लेकिन पहिचानने की जरूरत क्या थी। वह कष्ट में था। कोई सहायक उसके पास नहीं था। ऐसी दशा में हमारा कर्त्तव्य क्या उसकी सहायता करना नहीं था?'

रामकुमार—'इस तरह हम किस-किस की सहायता करते फिरेंगे।'

कृष्णकिशोर—'भाई, इस प्रकार क्यों सोचते हो? यदि दूसरे हम लोगों की सहायता न करें तो क्या हम जीवित रह सकते हैं?"

रामकुमार—'हमारी सहायता दूसरा कोई क्यों करता है?'

कृष्णकिशोर—'हमारे पैदा होने के साथ ही माता को, घर के दूसरे लोगों को हमारी सेवा करनी पड़ी और वे वर्षों हमारी सेवा करते रहे।

रामकुमार—'लेकिन वे तो हमारे घर के लोग हैं।'

कृष्णकिशोर—'सरकार पुलिस सेवा सफाई का प्रबन्ध न करे तो हमारी क्या दशा हो। इसी तरह हम कपड़ा अन्न और दूसरी चीजें तो उनको उत्पन्न करने वाले हमारी कितनी सेवा करते हैं।

रामकुमार—'इस प्रकार तो बहुत अधिक लोगों की सेवा हम लेते हैं।

कृष्णकिशोर—'सच यह है कि समाज में एक दूसरे की सेवा के कारण ही अपना काम चला पाते हैं। हम भी कभी मुसीबत में पड़ सकते हैं और तब हम दूसरों की सहायता पर ही निर्भर होते हैं।

कृष्णकिशोर—'हम अपनी शक्ति के अनुसार सेवा कर सकते हैं। हमें किसी की सेवा मिलने पर भाई यह हमारा कर्त्तव्य है। हम किसी विपत्ति में पड़े की सेवा करते हैं तब अपना कर्तव्यपालन करते हैं और अपनी मनुष्यता की रक्षा करते हैं।

सहनशीलता

मोहन रोता हुआ घर आया। माता ने रोने का कारण पूछा तो वह बोला—'नरेश मुझे गाली दे रहा था।'

माता—'बेटे! गाली देने से तुझे कहीं चोट लगी?'

मोहन—'नहीं, लेकिन वह बहुत गन्दी गालियाँ दे रहा था।'

माता—'तुम पहिले थोड़ा गोबर ले आओ।'

मोहन गोबर ले आया और माता को देने लगा। लेकिन माता ने गोबर लिया नहीं। वे बोलीं—'इस गोबर को वहाँ मलकर धो डालो जहाँ गालियाँ लगी हों।'

मोहन—'गाली कहाँ लगती है?'

माता—'कहीं नहीं लगती? जाने दो, तब गोबर फेंक दो।'

मोहन ने गोबर फेंक दिया, तब माता बोली—'तुम्हारा दिया गोबर मैंने नहीं लिया। अब गोबर से किसके हाथ गन्दे हुए, तुम्हारे या मेरे?'

मोहन—'मेरे।'

माता—'गाली न तुम्हें चोट पहुँचाती और न कहीं चिपकती। कोई गाली देता है तो तुम उसकी परवाह मत करो। फिर तो उन गन्दी गालियों से उसी का मुँह गन्दा होगा न?'

मोहन—'गाली देने पर कुछ भी न बोलूँ?'

माता—'हाँ, तुम्हें सहनशील होना चाहिये।'

मोहन—'गाली देने पर न बोलने से मैं सहनशील हो जाऊँगा?'

माता—'सहनशील बनना यहाँ से प्रारम्भ होगा। देखो-तुम पाठशाला जाते हो। कई बार तुम्हें कड़ी धूप में जाना पड़ता है। कभी वर्षा होती है।'

मोहन—'कभी खूब सर्दी भी पड़ती है।'

माता—'हाँ, लेकिन वर्षा, धूप या सर्दी तुम न सहो तो?'

मोहन—'तब तो बहुत कम दिन पाठशाला जा पाऊँगा और परीक्षा में फेल हो जाऊँगा।'

माता—'बेटे ! इसी तरह हम लोगों की यह जिन्दगी है। जिन्दगी में तो बहुत ज्यादा धूप, सर्दी, वर्षा सहने का समय आता है। आदमी को बीमारी भी होती है और उसे बहुत सी कठिनाइयाँ भी सहनी पड़ती हैं। लोग उसकी निन्दा भी करते हैं, कभी-कभी उसे हानि भी पहुँचाते हैं। सब उसे सहना पड़ता है।'

मोहन—'जो नहीं सहता, वह फेल हो जाता है ?'

माता—'हाँ, जो इन सब मुसीबतों को सह लेने का अभ्यास नहीं कर लेता, वह जिन्दगी में फेल हो जाता है।'

मोहन—'तब क्या करता है ? रोता है ?'

माता—'उसे जिन्दगी भर रोना ही पड़ता है। वह किसी काम में सफल नहीं होता। उसकी मुसीबतें बढ़ती जाती हैं। वह बराबर दुःखी रहता है और व्यर्थ दूसरों को दोष देता रहता है।'

मोहन—'तब मैं सहनशील बनूँगा।'

माता—'हाँ, यही ठीक बात है। धूप, वर्षा, सर्दी ही नहीं बीमारी, नुकसान, गाली, दूसरों का विरोध और ऐसी सब मुसीबतें जो आती हैं, उन्हें प्रसन्न मन से झेल लेना और अपने काम में लगे रहना सहनशील आदमी की पहिचान है। जिन्दगी की परीक्षा में वही पास होता है। सफलता और सुख उसी को मिलते हैं।

उद्योग

'जीवन का सबसे बड़ा पुरस्कार
ने सफेद खादी पहिने एक देश के प्रसिद्ध नेता
ते हुए कह रहे थे— 'हमारे सब दुःख सब अभाव
अपने उद्योग से दूर हो सकते हैं।

'हमारे खेत वर्षा न होने से सूख रहे हैं
ने कहा— 'हम उद्योग कर के वर्षा तो नहीं करा सकते

'यह ठीक है कि वर्षा करा लेना हमारे वश में नहीं है, नेताजी ने कहा— 'लेकिन खेतों को सींचने की कोई व्यवस्था हम लोग जरूर कर सकते हैं सब उद्योग करने को तैयार हों।'

'हम तैयार हैं।' एक स्वर से सबने कहा।

'तब आइये, यही काम पहिले किया जाय। वे जी और गाँव के सब लोग सलाह करने लगे। पूछने पर पता लगा कि गाँव से थोड़ी दूरी पर एक तालाब है और उसमें खूब पानी है।

'तालाब दूर है।' एक किसान बोला— 'उसका पानी सब खेतों तक नहीं चढ़ेगा।'

'हम सब लोग मिलकर तालाब को नजदीक पकड़ लावेंगे।' नेताजी ने हँसकर कहा— 'पानी जहाँ खुद नहीं चढ़ेगा, वहाँ उसे कान पकड़ कर चला देंगे।'

नेताजी ने फावड़े, टोकरियाँ पानी उलचने के छबड़े आदि मँगवाये। वे जब तालाब पर जाकर खुद गैंती लेकर नाली खोदने लगे तो गाँव के सभी लोगों में जोश आ गया।

नौजवान नाली खोदने लगे। बूढ़े, बच्चे और स्त्रियाँ मिट्टी फेंकने लगीं।

पाँच-छः घण्टे में तालाब से लेकर खेतों के पास मुख्य-मुख्य स्थानों तक नालियाँ खुद गईं।

बहुत से खेतों में तालाब का पानी नालियों से ही पहुँच गया। ऊँचे खेतों के पास गड्ढों में भरा पानी छबड़ियों से खेत में उलीचा जाने लगा। चाँदनी रात थी। लोग उत्साह में थे। रात के दस बजे तक काम हुआ और गाँव के लगभग सभी खेत सींचे जा चुके थे।

नेताजी के पास जब वे फिर इकट्ठे हुये तो गाँव के मुखिया ने कहा—'हमने आपकी कृपा से अकाल को पछाड़ दिया है।'

नेताजी ने कहा—'आप सबके श्रमदान ने यह चमत्कार किया है। आदमी हताश होकर बैठ न जाय, वह उद्योग करने के लिए कमर कसे तैयार खड़ा रहे तो ऐसी कोई कठिनाई नहीं, जिसे वह पछाड़ न सके। परिश्रमी के पैर कठिनाई की ठोकर से रुकते नहीं। सफलता को उसके चरण चूमने पड़ते हैं।'